सम्पादकीय
स्वामी श्रद्धानन्द : एक प्रेरक व्यक्तित्व

हमारा यह प्यारा भारत देश सदा से ही महापुरुषों की जन्मभूमि रहा है । समय-समय पर यहाँ अनेक महापुरुषों ने जन्म लिया है जिन्होंने अपनी जीवन-शैली एवं आदर्शों से न केवल मानवता का मार्गदर्शन किया है अपितु जनमानस में व्याप्त बुराइयों/कुरीतियों को निर्मूल कर समाज का मार्ग प्रशस्त भी किया है । ऐसे ही एक महापुरुष थे- आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती के शिष्य **स्वामी श्रद्धानन्द** ।

स्वामी श्रद्धानन्द का संन्यास से पूर्व का नाम मुंशीराम था । इनका जन्म 22 फरवरी सन् 1856 को पंजाब प्रान्त के अन्तर्गत जालन्धर जिले के तलवन ग्राम में हुआ था तथा इनके पिता श्री नानकचन्द विज तत्कालीन अंग्रेजी राज में पुलिस के अधिकारी थे । मुंशीराम पेशे से वकील थे और उन्होंने इस रूप में काफी प्रसिद्धि भी प्राप्त की थी । कालांतर में महर्षि दयानन्द सरस्वती के सम्पर्क में आने से इनका झुकाव आर्य समाज की ओर हुआ तथा यहीं से इनके सार्वजनिक जीवन का प्रारम्भ हुआ । महर्षि दयानन्द के अकाट्य तर्कों एवं प्रभावशाली व्यक्तित्व के प्रभाव से मुंशीराम दृढ़ ईश्वर विश्वासी एवं वैदिक धर्म के अनन्य भक्त बन गए थे । सन् 1917 में इन्होंने संन्यास धारण किया तथा तत्पश्चात् इन्हें स्वामी श्रद्धानन्द के नाम से जाना जाने लगा ।

स्वामी श्रद्धानन्द का सामाजिक जीवन बहुत ही व्यापक एवं विराट रहा है । उनके सामाजिक जीवन के विविध आयामों की एक झलक विकीपीडिया पर दिये गए उनके जीवन परिचय में दिखलाई पड़ती है । विकीपीडिया पर लिखा है कि, **"महर्षि दयानन्द के महाप्रयाण के बाद उन्होंने स्वयं को स्व-देश, स्व-संस्कृति, स्व-समाज, स्व-भाषा, स्व-शिक्षा, नारी कल्याण, दलितोत्थान, स्वदेशी प्रचार, वेदोत्थान, पाखण्ड खण्डन, अन्धविश्वास-उन्मूलन और धर्मोत्थान के कार्यों को आगे बढ़ाने में पूर्णत: समर्पित कर दिया । गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना, अछूतोद्धार, शुद्धि, सद्धर्म प्रचार, पत्रिका द्वारा धर्म प्रचार, सत्य धर्म के आधार पर साहित्य रचना, वेद पढ़ने व पढ़ाने की व्यवस्था करना, धर्म के पथ पर अडिग रहना, आर्यभाषा के प्रचार तथा उसे जीविकोपार्जन की भाषा बनाने का सफल प्रयास, आर्य जाति के उन्नति के लिए हर प्रकार से प्रयास करना आदि ऐसे कार्य हैं जिनके फलस्वरूप स्वामी श्रद्धानन्द अनन्त काल के लिए अमर हो गए ।"**

विकीपीडिया पर लिखित उपर्युक्त बिन्दुओं पर दृष्टिपात करने से स्वामी श्रद्धानन्द के सामाजिक जीवन की विराटता एवं व्यापकता का सहज ही अनुमान हो जाता है । उपर्युक्त प्रत्येक बिंदु पर विस्तारपूर्वक लिखा जाना यहाँ सम्भव नहीं है, परन्तु इतना तो कहा ही जा सकता है कि जहाँ एक ओर वह देश की स्वतन्त्रता के लिए कार्य कर रहे थे वहीं साथ-साथ उन्हें दलितों एवं नारी की दुर्दशा की भी चिन्ता सताए जाती थी । एक तरफ वह वेदोत्थान एवं पाखण्ड-खण्डन के लिए कार्य कर रहे थे तो दूसरी तरफ अछूतोद्धार एवं विधर्मी हो चुके अपने भाइयों की स्वधर्म वापसी (घरवापसी) के लिए शुद्धि आन्दोलन भी संचालित कर रहे थे । इस प्रकार समाज कल्याण का कोई भी आयाम उनसे

अछूता नही रह गया था । अपने कार्यक्षेत्र की व्यापकता एवं कुशल नेतृत्व क्षमता के कारण वह तत्कालीन जनसामान्य के साथ-साथ, विशिष्ट एवं प्रभावशाली लोगों के बीच भी खासे लोकप्रिय हो गये थे । डॉ0 भीमराव अम्बेडकर, महात्मा गांधी एवं लाला लाजपतराय जैसे महान लोगों के बीच स्वामी श्रद्धानन्द एक अग्रगण्य नेता के रूप में स्थापित हो चुके थे । **डॉ0 भीमराव अम्बेडकर** ने सन् 1922 में कहा था कि **श्रद्धानन्द अछूतों के महानतम और सबसे सच्चे हितैषी हैं** । (विकिपीडिया) महात्मा गाँधी ने अपने एक वक्तव्य में उन्हें अपना मार्गदर्शक एवं बड़ा भाई स्वीकार किया है । जब महात्मा गाँधी प्रथम बार गुरुकुल कांगड़ी में पधारे तो उनके सम्मान में एक कार्यक्रम आयोजित किया गया था । उस कार्यक्रम में **महात्मा गाँधी** ने कहा था कि, **"मैं महात्मा मुंशीराम से मिलने के उद्देश्य से ही हरिद्वार आया हूँ । उन्होंने पत्रों में मुझे भाई कहा है, इसका मुझे गर्व है । कृपया आप लोग यही प्रार्थना करें कि मैं उनका भाई बनने के योग्य हो सकूँ । अब मैं विदेश नहीं जाऊँगा । मेरे एक भाई (लक्ष्मीदास गांधी) चल बसे हैं । मैं चाहता हूँ कोई मेरा मार्गदर्शन करे । मुझे आशा है कि महात्मा मुंशीराम जी उनका स्थान ले लेंगे और मुझे भाई मानेंगे ।" (सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय एवं हिन्दू 12.04.1995 अंक)**

उपर्युक्त कार्यक्रम में ही महात्मा मुंशीराम ने गांधी जी को एक अभिनन्दन पत्र भी भेंट किया था जिसमें उन्होंने सर्वप्रथम गांधी जी के नाम के पूर्व महात्मा शब्द जोड़कर उन्हें महात्मा की पदवी प्रदान की थी । कालान्तर में कतिपय लेखकों द्वारा यह प्रचारित कर दिया गया कि श्री रवीन्द्रनाथ टैगोर ने गांधी को सर्वप्रथम महात्मा कहकर सम्बोधित किया था । इसका कारण चाहे जो भी रहा हो परन्तु इस सम्बन्ध में कोई ठोस प्रमाण प्राप्त नहीं हो पाता है । इस विषय पर डॉ0 सुरेन्द्र कुमार, पूर्व कुलपति, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का आलेख, **'स्वामी श्रद्धानन्द: जिन्होंने मिस्टर गांधी को महात्मा गांधी बनाया' (गुरुकुल पत्रिका, Vol. 68/1-2, July-Dec. 2016)** समुचित मार्गदर्शन कर सकता है, जिसमें तर्क एवं प्रमाणों के आधार पर इस तथ्य पर विचार किया गया है कि स्वामी श्रद्धानन्द ने ही गांधी को सर्वप्रथम महात्मा की उपाधि से विभूषित किया था । इसके अतिरिक्त यदि किन्हीं के पास श्री रवीन्द्रनाथ टैगोर द्वारा सर्वप्रथम महात्मा की उपाधि दिये जाने से सम्बन्धित कोई ठोस प्रमाण उपलब्ध हो तो उससे अवगत कराने की कृपा करें । इससे हमारा भी ज्ञानवर्द्धन होगा एवं साथ ही हम उक्त सज्जन के सदैव आभारी रहेंगे ।

स्वामी श्रद्धानन्द त्याग एवं तपस्या की प्रतिमूर्ति थे । उन्होंने अपना सर्वस्व त्याग कर समाज सेवा को अपनाया । जब उन्होंने लार्ड मैकाले की शिक्षा पद्धति के विरुद्ध स्वदेशी शिक्षा को बढ़ावा देने हेतु महर्षि दयानन्द द्वारा अनुमोदित प्राचीन गुरुकुल पद्धति के अनुसार गुरुकुल प्रारम्भ करने का निर्णय लिया तो सर्वप्रथम अपनी सम्पत्ति गुरुकुल को दान देकर तथा स्वयं के दोनों पुत्रों को शिष्य के रूप में साथ लेकर गुरुकुल की स्थापना की । गुरुकुल की स्थापना से पूर्व उन्होंने एक बार संकल्प किया कि जब तक गुरुकुल के लिए तीस हज़ार की राशि एकत्र नहीं कर लेंगे तब तक अपने घर में पैर नहीं रखेंगे । ध्यातव्य है कि गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना सन् 1902 मे हुई थी एवं उस समय तीस हजार एक बहुत बड़ी राशि थी । परन्तु उनके दृढ़ संकल्प एवं उद्देश्य के प्रति कर्मठता के कारण अगले छ: माह में इससे भी अधिक राशि एकत्र कर ली गई थी ।

स्वामी श्रद्धानन्द जब तक जीवित रहे उन्होंने अपने जीवन का एक-एक क्षण भारत माता की स्वतन्त्रता, वैदिक धर्म के प्रचार, स्वभाषा, स्वशिक्षा, वेदोत्थान, दलित उत्थान, नारी उत्थान, शुद्धि आन्दोलन, अन्धविश्वास उन्मूलन,

पाखण्ड खण्डन इत्यादि के लिए समर्पित कर दिया । 23 दिसम्बर 1926 को अब्दुल रशीद नामक एक धर्मान्ध व्यक्ति ने धर्म-चर्चा करने के बहाने से इनके कक्ष में प्रवेश किया तथा गोली मारकर इनकी हत्या कर दी । स्वामी श्रद्धानन्द की शहादत पर कम्पनी बाग (दिल्ली) की एक बहुत बड़ी सभा में **लाला लाजपतराय** ने कहा था कि **"श्रद्धानन्द तुम्हारे जीवन पर भी मैंने सदा रश्क किया और मौत पर भी रश्क करता हूँ । भगवान मुझे भी ऐसी ही मौत दे तो मैं इतना समझू कि मैं तुमसे आगे न बढ़ सका तो पीछे भी न रहा ।"** (ज्वलन्त शास्त्री, सम्पादकीय, कल्याणमार्ग का पथिक) **पं0 मदनमोहन मालवीय** जी ने भी लिखा है कि **"जब हजारों मुसलमान और ईसाई हिन्दुओं को तबलीग या धर्मपरिवर्तन के काम करने को बैठे हैं तब कोई हमे यह नहीं कह सकता कि हिन्दुओं को शुद्धि नहीं करनी चाहिये । स्वामी श्रद्धानन्द की ऐसी मृत्यु हिन्दु धर्म के मृत शरीर में नया प्राण-मन्त्र फूँकने जैसा है, जैसे गुरु तेगबहादुर की मृत्यु से हिन्दू जाति में जागृति आई थी और औरंगजेब का जोर टूटा था।"** (ज्वलन्त शास्त्री, सम्पादकीय, कल्याण मार्ग का पथिक)

स्वामी श्रद्धानन्द का व्यक्तित्व ऐसा था कि उनके सम्पर्क में आने वाला कोई भी व्यक्ति उनसे प्रभावित हुए बिना नहीं रह पाता था । 8 नवम्बर 1913 को ब्रिटेन के प्रधानमंत्री पी0 रैम्जे मैकडॉनल्ड ने गुरुकुल का भ्रमण किया था । स्वामी श्रद्धानन्द के भव्य व्यक्तित्व के दर्शन कर उन्होंने जो कुछ कहा वह जानने योग्य है । उनका कथन है- **"एक उन्नतकाय दर्शनीय मूर्ति (प्रभावपूर्ण सौन्दर्य की प्रतिमा) हमसे भेंट करने आती है । वर्तमान काल का कोई कलाकार यदि भगवान ईसा की मूर्ति बनाने के लिए कोई जीवित मॉडल लेना चाहते तो मैं इस भव्य मूर्ति की ओर इशारा करूँगा । यदि कोई मध्यकालीन चित्रकार सेंट पीटर के लिए नमूना लेना चाहे तो मैं उसे जीवित मूर्ति के दर्शन करने की प्रेरणा करूँगा।"** (प्रो0 स्वतन्त्र कुमार, सम्पादकीय, मेरे पिता स्वामी श्रद्धानन्द) भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन में योगदान एवं उनके सामाजिक कार्यों के महत्व को देखते हुए सन् 1970 में भारत सरकार ने स्वामी श्रद्धानन्द की स्मृति एवं सम्मान में डाक टिकट भी जारी किया था । स्वामी श्रद्धानन्द का जीवन चरित्र एवं उनके आदर्श युगों युगों तक समाज का मार्गदर्शन करते रहेंगे ।

स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस (23 दिसम्बर) के अवसर पर उनके आदर्शों एवं समाज कल्याण के कार्यों को स्मरण कर, उनसे प्रेरणा लेना मैं अपना एवं प्रत्येक सामाजिक सरोकार रखने वाले व्यक्ति का पुनीत कर्तव्य समझता हूँ । इसी कर्तव्य की पूर्ति हेतु परिचय के रूप में स्वामी श्रद्धानन्द के प्रेरक व्यक्तित्व की एक झलक पाठकों के सम्मुख रखने का प्रयास किया है । वस्तुतः उनके महान व्यक्तित्व एवं कार्यों को दो-चार पृष्ठों में समेट पाना कठिन ही नहीं अपितु असंभवप्राय है । इसके अतिरिक्त स्वामी श्रद्धानन्द को स्मरण करना इसलिए भी आवश्यक हो जाता है कि जब अंग्रेजी शासनकाल में लार्ड मैकाले की शिक्षा पद्धति का प्रचार-प्रसार चरम पर था, तब भारतीय शिक्षा पद्धति को ग्रहण कर गुरुकुल की स्थापना करना शिक्षा के क्षेत्र में एक क्रान्तिकारी कदम था । गुरुकुल में भारतीय ज्ञान परम्परा के अनुरुप वेद, उपनिषद, सूत्रग्रन्थ, भगवद्गीता एवं पाणिनीय व्याकरण आदि की शिक्षा की व्यवस्था की गई । यहाँ यह कहना भी अतिश्योक्ति नहीं होगा कि स्वामी श्रद्धानन्द की उक्त क्रान्तिकारी पहल के दूरगामी परिणाम के रूप में ही आज हम भारतीय ज्ञान परम्परा को पुनर्जीवित होता हुआ देख रहे हैं।

अस्तु, शोधामृत का यह द्वितीय अंक पाठकों के सम्मुख रख रहा हूँ । आशा करता हूँ कि पाठकगण इससे अवश्य ही लाभान्वित होंगे । हम इस शोध-पत्रिका में निरन्तर सुधार करते हुए इसे शोध की सर्वश्रेष्ठ पत्रिकाओं में शामिल करने हेतु प्रतिबद्ध हैं । अतः पाठकों से निवेदन है कि यदि उन्हें किसी भी प्रकार की कोई न्यूनता परिलक्षित होती है तो निस्संकोच अवगत कराने की कृपा करें । आपके सुझावों का स्वागत है ।

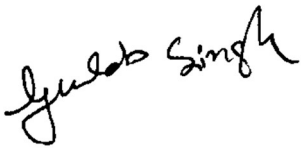

डॉ0 गुलाब सिंह

अंक संपादक